Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

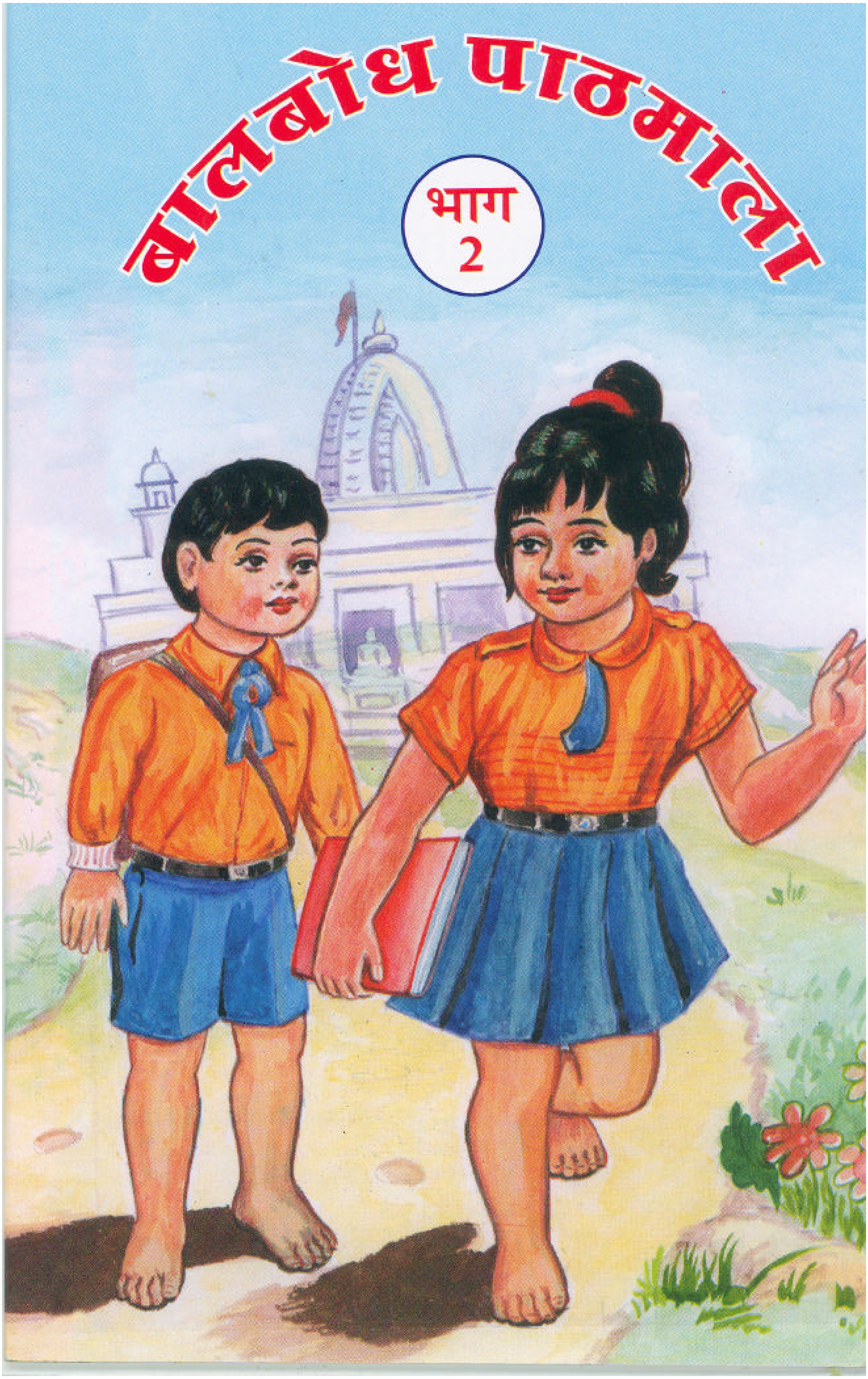

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

(मगनमल पाटनी ग्रंथमाला का प्रथम पुष्प)

बालबोध पाठमाला भाग 2

(श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड द्वारा निर्धारित)

लेखक व सम्पादक :

डॉ. हुकुमचन्द भारिल्ल

शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पीएच.डी.

संयुक्तमंत्री, पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर

प्रकाशक :

मगनमल सौभागमल पाटनी फैमिली चेरिटेबल ट्रस्ट, मुम्बई

एवं

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

हिन्दी :

प्रथम चौबीस संस्करण (अगस्त 68 से अद्यतन)	:	1 लाख 96 हजार 600
पच्चीसवाँ संस्करण (12 जुलाई 2006)	:	5 हजार
योग	:	2 लाख 01 हजार 600

अन्य भाषाओं में प्रकाशित

गुजराती	: तीन संस्करण	:	13 हजार
मराठी	: छह संस्करण	:	22 हजार 200
कन्नड़	: दो संस्करण	:	2 हजार
तमिल	: दो संस्करण	:	3 हजार 500
बंगला	: प्रथम संस्करण	:	1 हजार
अंग्रेजी	: दो संस्करण	:	8 हजार 200
महायोग		:	**2 लाख 51 हजार 500**

मूल्य : **तीन रुपये**

मुद्रक :
प्रिन्ट "ओ" लैण्ड
बाईस गोदाम, जयपुर

विषय-सूची

क्रम	नाम पाठ	पृष्ठ
1.	देव स्तुति	03
2.	पाप	07
3.	कषाय	11
4.	सदाचार	15
5.	गतियाँ	20
6.	द्रव्य	24
7.	भगवान महावीर	30
8.	जिनवाणी स्तुति	35

Thanks & Our Request

This shastra has been kindly donated by Dakshaben Sanghvi, Geneva, Switzerland who has paid for it to be "electronised" and made available on the internet.

Our request to you:

1) Great care has been taken to ensure this electronic version of BalbodhPathmala – Part 2 (Hindi) is a faithful copy of the paper version. However if you find any errors please inform us on rajesh@AtmaDharma.com so that we can make this beautiful work even more accurate.

2) Keep checking the version number of the on-line shastra so that if corrections have been made you can replace your copy with the corrected one.

Version History

Version Number	Date	Changes
001	23 May 2008	First electronic version

संकल्प —

'भगवान बनेंगे'

सम्यग्दर्शन प्राप्त करेंगे।
सप्तभयों से नहीं डरेंगे॥
सप्त तत्त्व का ज्ञान करेंगे।
जीव-अजीव पहिचान करेंगे॥
स्व-पर भेदविज्ञान करेंगे।
निजानन्द का पान करेंगे॥
पंच प्रभु का ध्यान धरेंगे।
गुरुजन का सम्मान करेंगे॥
जिनवाणी का श्रवण करेंगे।
पठन करेंगे, मनन करेंगे॥
रात्रि भोजन नहीं करेंगे।
बिना छना जल काम न लेंगे॥
निज स्वभाव को प्राप्त करेंगे।
मोह भाव का नाश करेंगे॥
रागद्वेष का त्याग करेंगे।
और अधिक क्या? बोलो बालक!

भक्त नहीं, भगवान बनेंगे॥

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाठ पहला

देव-स्तुति

वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, भविजन की अब पूरो आस।
ज्ञान भानु का उदय करो, मम मिथ्यातम का होय विनास॥
जीवों की हम करुणा पालें, झूठ वचन नहीं कहें कदा।
परधन कबहुँ न हरहूँ स्वामी, ब्रह्मचर्य व्रत रखें सदा॥
तृष्णा लोभ न बढ़े हमारा, तोष सुधा नित पिया करें।
श्री जिनधर्म हमारा प्यारा, तिस की सेवा किया करें॥
दूर भगावें बुरी रीतियाँ, सुखद रीति का करें प्रचार।
मेल-मिलाप बढ़ावें हम सब, धर्मोन्नति का करें प्रसार॥
सुख-दुख में हम समता धारें, रहें अचल जिमि सदा अटल।
न्याय-मार्ग को लेश न त्यागें, वृद्धि करें निज आतमबल॥
अष्ट करम जो दुःख हेतु हैं, तिनके क्षय का करें उपाय।
नाम आपका जपें निरन्तर, विघ्न शोक सब ही टल जाय॥
आतम शुद्ध हमारा होवे, पाप मैल नहिं चढ़े कदा।
विद्या की हो उन्नति हम में, धर्म ज्ञान हूँ बढ़े सदा॥
हाथ जोड़कर शीश नवावें, तुमको भविजन खड़े-खड़े।
यह सब पूरो आस हमारी, चरण शरण में आन पड़े॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

देव-स्तुति का सारांश

यह स्तुति सच्चे देव की है। सच्चा देव उसे कहते हैं, जो वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी हो। वीतरागी वह है जो राग-द्वेष से रहित हो और जो लोकालोक के समस्त पदार्थों को एकसाथ जानता हो, वही सर्वज्ञ है। आत्महित का उपदेश देने वाला होने से वीतरागी, सर्वज्ञ, हितोपदेशी कहलाता है।

वीतराग भगवान से प्रार्थना करता हुआ भव्य जीव सबसे पहिले यही कहता है कि मैं मिथ्यात्व का नाश और सम्यग्ज्ञान को प्राप्त करूँ, क्योंकि मिथ्यात्व का नाश किए बिना धर्म का आरंभ ही नहीं होता है।

इसके बाद वह अपनी भावना व्यक्त करता हुआ कहता है कि मेरी प्रवृत्ति पाँचों पापों और कषायों में न जावे। मैं हिंसा न करूँ, झूठ न बोलूँ, चोरी न करूँ, कुशील सेवन न करूँ तथा लोभ के वशीभूत होकर परिग्रह संग्रह न करूँ, सदा सन्तोष धारण किए रहूँ और मेरा जीवन धर्म की सेवा में लगा रहे।

हम धर्म के नाम पर फैलने वाली कुरीतियों गृहीत मिथ्यात्वादि और सामाजिक कुरीतियों को दूर करके धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में सही परम्पराओं का निर्माण करें तथा परस्पर में धर्म-प्रेम रखें।

हम सुख में प्रसन्न होकर फूल न जावें और दुःख को देख कर घबड़ा न जावें, दोनों ही दशाओं में धैर्य से काम लेकर समताभाव रखें तथा न्याय-मार्ग पर चलते हुए निरन्तर आत्मबल में वृद्धि करते रहें।

आठों ही कर्म दुःख के निमित्त हैं, कोई भी शुभाशुभ कर्म सुख का कारण नहीं है, अतः हम उनके नाश का उपाय करते रहें। आपका स्मरण सदा रखें जिससे सन्मार्ग में कोई विघ्न बाधायें न आवें।

हे भगवन् ! हम और कुछ भी नहीं चाहते हैं, हम तो मात्र यही चाहते हैं कि हमारी आत्मा पवित्र हो जावे और उसे मिथ्यात्वादि पापों रूपी मैल कभी भी मलिन न करे तथा लौकिक विद्या की उन्नति के साथ हमारा धर्मज्ञान (तत्त्वज्ञान) निरन्तर बढ़ता रहे।

हम सभी भव्य जीव खड़े हुए हाथ जोड़कर आपको नमस्कार कर रहे हैं, हम तो आपके चरणों की शरण में आ गये हैं, हमारी भावना अवश्य ही पूर्ण हो।

प्रश्न –

१. यह स्तुति किसकी है ? सच्चा देव किसे कहते हैं ?

२. पूरी स्तुति सुनाइये या लिखिए।

३. उक्त प्रार्थना का आशय अपने शब्दों में लिखिए।

४. निम्नांकित पंक्तियों का अर्थ लिखिए :–

"ज्ञान भानु का उदय करो, मम मिथ्यातम का होय विनास॥"

"दूर भगावें बुरी रीतियाँ, सुखद रीति का करें प्रचार॥"

"अष्ट करम जो दुःख हेतु हैं, तिनके क्षय का करें उपाय॥"

पाठ में आये हुए सूत्रात्मक सिद्धान्त-वाक्य –

१. जो वीतराग, सर्वज्ञ और हितोपदेशी हो, वही सच्चा देव है।

२. जो राग-द्वेष से रहित हो, वही वीतरागी है।

३. जो लोकालोक के समस्त पदार्थों को एकसाथ जानता हो, वही सर्वज्ञ है।

४. आत्म-हितकारी उपदेश देनेवाला होने से वही हितोपदेशी है।

५. मिथ्यात्व का नाश किए बिना धर्म का आरंभ नहीं होता।

६. आठों ही कर्म दु:ख के निमित्त हैं, कोई भी शुभाशुभ कर्म सुख का कारण नहीं है।

७. ज्ञानी भक्त आत्मशुद्धि के अलावा और कुछ नहीं चाहता।

पाठ दूसरा | पाप

पुत्र – पिताजी लोग कहते हैं कि लोभ पाप का बाप है, तो यह लोभ सबसे बड़ा पाप होता होगा ?

पिता – नहीं बेटा, सबसे बड़ा पाप तो मिथ्यात्व ही है, जिसके वश होकर जीव घोर पाप करता है।

पुत्र – पाँच पापों में तो इसका नाम है नहीं। उनके नाम तो मुझे याद हैं – हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह।

पिता – ठीक है बेटा ! पर लोभ का नाम भी तो पापों में नहीं है किन्तु उसके वश होकर लोग पाप करते हैं, इसीलिए तो उसे पाप का बाप कहा जाता है; उसी प्रकार मिथ्यात्व तो ऐसा भयंकर पाप है कि जिसके छूटे बिना संसार-भ्रमण छूटता ही नहीं।

पुत्र – ऐसा क्यों ?

पिता – उल्टी मान्यता का नाम ही तो मिथ्यात्व है। जब तक मान्यता ही उल्टी रहेगी तब तक जीव पाप छोड़ेगा कैसे ?

पुत्र – तो, सही बात समझना ही मिथ्यात्व छोड़ना है ?

पिता – हाँ, अपनी आत्मा को सही समझ लेना ही मिथ्यात्व छोड़ना है। जब यह जीव अपनी आत्मा को पहिचान लेगा तो पाप भी छोड़ने लगेगा।

पुत्र – किसी जीव को सताना, मारना उसका दिल दुखाना ही हिंसा है न ?

पिता – हाँ, दुनिया तो मात्र इसी को हिंसा कहती है; पर अपनी आत्मा में जो मोह-राग-द्वेष उत्पन्न होते हैं वे भी हिंसा हैं, इसकी खबर उसे नहीं।

पुत्र – ऐं ! तो फिर गुस्सा करना और लोभ करना आदि भी हिंसा होगी?

पिता – सभी कषायें हिंसा हैं। कषायें अर्थात् राग-द्वेष और मोह को ही तो भावहिंसा कहते हैं। दूसरों को सताना-मारना आदि तो द्रव्यहिंसा है।

पुत्र – जैसा देखा, जाना और सुना हो, वैसा ही न कहना झूठ है, इसमें सच्ची समझ की क्या जरूरत है ?

पिता – जैसा देखा, जाना और सुना हो, वैसा ही न कह कर अन्यथा कहना तो झूठ है ही, साथ ही जब तक हम किसी बात को सही समझेंगे नहीं, तब तक हमारा कहना सही कैसे होगा ?

पुत्र – जैसा देखा, जाना और सुना, वैसा कह दिया। बस छुट्टी।

पिता – नहीं ! हमने किसी अज्ञानी से सुन लिया कि हिंसा में धर्म होता है, तो क्या हिंसा में धर्म मान लेना सत्य हो जायेगा ?

पुत्र – वाह ! हिंसा में धर्म बताना सत्य कैसे होगा ?

पिता – इसीलिए तो कहते हैं कि सत्य बोलने के पहिले सत्य जानना आवश्यक है।

पुत्र – किसी दूसरे की वस्तु को चुरा लेना ही चोरी है ?

पिता – हाँ, किसी की पड़ी हुई, भूली हुई, रखी हुई वस्तु को बिना उसकी आज्ञा लिए उठा लेना या उठाकर किसी को दे देना तो

चोरी है ही, किन्तु यदि परवस्तु का ग्रहण भी न हो परन्तु ग्रहण करने का भाव ही हो, तो वह भाव भी चोरी है।

पुत्र – ठीक है, पर यह कुशील क्या बला है ? लोग कहते हैं कि पराई माँ-बहिन को बुरी निगाह से देखना कुशील है। बुरी निगाह क्या होती है ?

पिता –विषय-वासना ही तो बुरी निगाह है। इससे अधिक तुम अभी समझ नहीं सकते।

पुत्र – अनाप-शनाप रुपया-पैसा जोड़ना ही परिग्रह है न ?

पिता –रुपया-पैसा मकान आदि जोड़ना तो परिग्रह है ही, पर असल में तो उनके जोड़ने का भाव तथा उनके प्रति राग रखना और उन्हें अपना मानना परिग्रह है। इसप्रकार की उल्टी मान्यता को मिथ्यात्व कहते हैं।

पुत्र – हैं ! मिथ्यात्व परिग्रह है ?

पिता –हाँ ! हाँ !! चौबीस प्रकार के परिग्रहों में सबसे पहिला नम्बर तो उसका ही आता है। फिर क्रोध, मान, माया और लोभ आदि कषायों का।

पुत्र – तो क्या कषायें भी परिग्रह हैं ?

पिता –हाँ ! हाँ !! हैं ही। कषायें हिंसा भी हैं और परिग्रह भी। वास्तव में तो सब पापों की जड़ मिथ्यात्व और कषायें ही हैं।

पुत्र – इसका मतलब तो यह हुआ कि पापों से बचने के लिए पहिले मिथ्यात्व और कषायें छोड़ना चाहिए ?

पिता –तुम बहुत समझदार हो, सच्ची बात तुम्हारी समझ में बहुत जल्दी आ गई। जो जीव को बुरे रास्ते में डाल दे, उसी को तो पाप कहते हैं। एक तरह से दुःख का कारण बुरा कार्य ही पाप है। मिथ्यात्व और कषायें बुरे काम हैं, अतः पाप हैं।

प्रश्न –

१. पाप कितने होते हैं ? नाम गिनाइये।

२. जीव घोर पाप क्यों करता है ?

३. क्या सत्य समझे बिना सत्य बोला जा सकता है ? तर्कसंगत उत्तर दीजिए।

४. क्या कषायें परिग्रह हैं ? स्पष्ट कीजिए।

५. द्रव्यहिंसा और भावहिंसा किसे कहते हैं ?

६. पापों से बचने के लिए क्या करना चाहिए ?

७. सबसे बड़ा पाप कौन है और क्यों ?

पाठ में आये हुए सूत्रात्मक सिद्धान्त वाक्य

१. दु:ख का कारण बुरा कार्य ही पाप है।

२. मिथ्यात्व और कषायें दु:ख के कारण बुरे कार्य होने से पाप हैं।

३. सबसे बड़ा पाप मिथ्यात्व है।

४. मिथ्यात्व के वश होकर जीव घोर पाप करता है।

५. मिथ्यात्व छूटे बिना भव-भ्रमण मिटता नहीं।

६. उल्टी मान्यता का नाम ही मिथ्यात्व है।

७. सही बात समझकर उसे मानना ही मिथ्यात्व छोड़ना है।

८. आत्मा में उत्पन्न होने वाले मोह-राग-द्वेष ही भावहिंसा हैं, दूसरों को सताना आदि तो द्रव्यहिंसा है।

९. सत्य बोलने के पहिले सत्य समझना आवश्यक है।

१०. मिथ्यात्व और कषायें परिग्रह के भेद हैं।

११. सब पापों की जड़ मिथ्यात्व और कषायें ही हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाठ तीसरा

कषाय

सुबोध – भाई तुम तो कहते थे कि आत्मा मात्र जानता-देखता है, पर क्या आत्मा क्रोध नहीं करता; छल-कपट नहीं करता?

प्रबोध – हाँ ! हाँ !! क्यों नहीं करता ? पर जैसा आत्मा का स्वभाव जानना-देखना है, वैसा आत्मा का स्वभाव क्रोध आदि करना नहीं। कषाय तो उसका विभाव है, स्वभाव नहीं।

सुबोध – यह विभाव क्या होता है ?

प्रबोध – आत्मा के स्वभाव के विपरीत भाव को विभाव कहते हैं। आत्मा का स्वभाव आनन्द है। मिथ्यात्व, राग, द्वेष (कषाय) आनन्द स्वभाव से विपरीत हैं, इसलिए वे विभाव हैं।

सुबोध – राग-द्वेष क्या चीज है ?

प्रबोध – जब हम किसी को भला जानकर चाहने लगते हैं, तो वह राग कहलाता है और जब किसी को बुरा जानकर दूर करना चाहते हैं, तो द्वेष कहलाता है।

सुबोध – और कषाय ?

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

प्रबोध – दिन-रात तो कषाय करते हो और यह भी नहीं जानते कि वह क्या वस्तु है ? कषाय राग-द्वेष का ही दूसरा नाम है। जो आत्मा को कसे अर्थात् दुःख दे, उसे ही कषाय कहते हैं। एक तरह से आत्मा में उत्पन्न होने वाला विकार राग-द्वेष ही कषाय है अथवा जिससे संसार की प्राप्ति हो वही कषाय है।

सुबोध – ये कषायें कितनी होती हैं ?

प्रबोध – कषायें चार प्रकार की होती हैं। क्रोध, मान, माया और लोभ।

सुबोध – अच्छा तो हम जो गुस्सा करते हैं, उसे ही क्रोध कहते होंगे।

प्रबोध – हाँ भाई ! यह क्रोध बहुत बुरी चीज है।

सुबोध – तो हमें यह क्रोध आता ही क्यों है ?

प्रबोध – मुख्यतया जब हम ऐसा मानते हैं कि इसने मेरा बुरा किया तो आत्मा में क्रोध पैदा होता है। इसी प्रकार जब हम यह मान लेते हैं कि दुनियाँ की वस्तुएँ मेरी हैं, मैं इनका स्वामी हूँ, तो मान हो जाता है।

सुबोध – यह मान क्या है ?

प्रबोध – घमण्ड को ही मान कहते हैं। लोग कहते हैं कि यह बहुत घमण्डी है। इसे अपने धन और ताकत का बहुत घमण्ड है। रुपया-पैसा, शरीरादि बाह्य पदार्थ टिकने वाले तो हैं नहीं, हम व्यर्थ ही घमण्ड करते हैं।

सुबोध – कुछ लोग छल-कपट बहुत करते हैं?

प्रबोध – हाँ भाई ! वह भी तो कषाय है, उसे ही तो माया कहते हैं। कहते हैं मायाचारी मर कर पशु होते हैं। मायाचारी जीव के मन में कुछ और होता है, वह कहता कुछ और है और करता उससे भी अलग है। छल-कपट लोभी जीवों को बहुत होता है।

सुबोध – लोभ कषाय के बारे में भी कुछ बताइए ?

प्रबोध – यह बहुत खतरनाक कषाय है, इसे तो पाप का बाप कहा जाता है। कोई चीज देखी कि यह मुझे मिल जाय, लोभी सदा यही सोचा करता है।

सुबोध – यह तो सब ठीक है कि कषायें बुरी चीज हैं, पर प्रश्न तो यह है कि ये उत्पन्न क्यों होती हैं और मिटें कैसे ?

प्रबोध – मिथ्यात्व (उल्टी मान्यता) के कारण परपदार्थ या तो इष्ट (अनुकूल) या अनिष्ट (प्रतिकूल) मालूम पड़ते हैं, मुख्यतया इसी कारण कषाय उत्पन्न होती हैं। जब तत्त्वज्ञान के अभ्यास से परपदार्थ न तो अनुकूल ही मालूम हो और न प्रतिकूल, तब मुख्यतया कषाय भी उत्पन्न न होगी।

सुबोध – अच्छा तो हमें तत्त्वज्ञान प्राप्त करने का अभ्यास करना चाहिए। उसी से कषाय मिटेगी।

प्रबोध – हाँ ! हाँ !! सच बात तो यही है।

प्रश्न –

१. कषाय किसे कहते हैं ? कषाय को विभाव क्यों कहा ?
२. कषाय से हानि क्या है ?
३. क्या कषाय आत्मा का स्वभाव है ?
४. कषायें कितनी होती हैं ? नाम बताइये।
५. कषायें क्यों उत्पन्न होती हैं ? वे कैसे मिटें ?
६. आत्मा का स्वभाव क्या है ?

पाठ में आये हुए सूत्रात्मक सिद्धान्त वाक्य –

१. जो आत्मा को कसे अर्थात् दु:खी करे, उसे कषाय कहते हैं।
२. कषाय राग-द्वेष का दूसरा नाम है।
३. कषाय आत्मा का विभाव है, स्वभाव नहीं।
४. आत्मा का स्वभाव जानना-देखना है।
५. क्रोध गुस्सा को कहते हैं।
६. मान घमण्ड को कहते हैं।
७. माया छल-कपट को कहते हैं।
८. किसी वस्तु को देखकर प्राप्ति की इच्छा होना ही लोभ है।
९. मुख्यतया मिथ्यात्व के कारण परपदार्थ इष्ट और अनिष्ट भासित होने से कषाय उत्पन्न होती हैं।
१०. तत्त्वज्ञान के अभ्यास से जब परपदार्थ इष्ट और अनिष्ट भासित न हों तो मुख्यतया कषाय भी उत्पन्न न होगी।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाठ चौथा

सदाचार

बाल-सभा

(कक्षा चार के बालकों की एक सभा हो रही है। बालकों में से ही एक को अध्यक्ष बनाया गया है। वह कुर्सी पर बैठा है।)

अध्यक्ष – (खड़े होकर) अब आपके सामने शान्तिलाल एक कहानी सुनायेंगे।

शान्तिलाल – (टेबल के पास खड़े होकर) माननीय अध्यक्ष महोदय एवं सहपाठी भाइयो और बहिनो !

अध्यक्ष महोदय की आज्ञानुसार मैं आपको एक शिक्षाप्रद कहानी सुनाता हूँ। आशा है आप शान्ति से सुनेंगे।

एक बालक बहुत हठी था। वह खाने-पीने का लोभी भी बहुत था। जब देखो तब अपने घर पर अपने भाई-बहिनों से जरा-जरा-सी चीजों पर लड़ पड़ता था, उसकी माँ उसे बहुत समझाती पर वह न मानता।

एक दिन उसके घर मिठाई बनी। माँ ने सब बच्चों को बराबर बाँट दी। सब मिठाई पाकर प्रसन्न होकर खाने लगे पर वह कहने लगा मेरा लड्डू छोटा है। दूसरे बच्चे तब तक लड्डू खा चुके थे, नहीं तो बदल दिया जाता। वह क्रोधी तो था ही, जोर-जोर से रोने

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

लगा और गुस्से में आकर लड्डू भी फैंक दिया। जाकर एक कोने में लेट गया। दिन भर खाना भी नहीं खाया। सबने बहुत मनाया पर वह तो घमण्डी भी था न, मानता कैसे ?

कोने में था एक बिच्छू और बिच्छू ने उसको काट खाया। उसे अपने किए की सजा मिल गई। दिन भर भूखा रहा, लड्डू भी गया और बिच्छू ने काट खाया सो अलग। क्रोधी, मानी, लोभी और हठी बालकों की यही दशा होती है। इसलिए हमें क्रोध, मान, लोभ एवं हठ नहीं करना चाहिए।

इतना कहकर मैं अपना स्थान ग्रहण करता हूँ।

(तालियों की गड़गड़ाहट)

अध्यक्ष – (खड़े होकर) शान्तिलाल ने बहुत शिक्षाप्रद कहानी सुनाई है। अब मैं निर्मला बहिन से निवेदन करूँगा कि वे भी कोई शिक्षाप्रद बात सुनावें।

निर्मला – (टेबल के पास खड़ी होकर)

आदरणीय अध्यक्ष महोदय एवं भाइयो और बहिनों ! मैं आपके सामने भाषण देने नहीं आई हूँ। मैंने अखबार में कल एक बात पढ़ी थी, वही सुना देना चाहती हूँ।

एक गाँव में एक बारात आई थी। उसके लिए रात में भोजन बन रहा था। अंधेरे में किसी ने देख नहीं पाया और साग में एक साँप गिर गया। रात में ही भोज हुआ। सब बारातियों ने भोजन किया पर चार-पाँच आदमी बोले हम तो रात में नहीं खाते। सबने

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

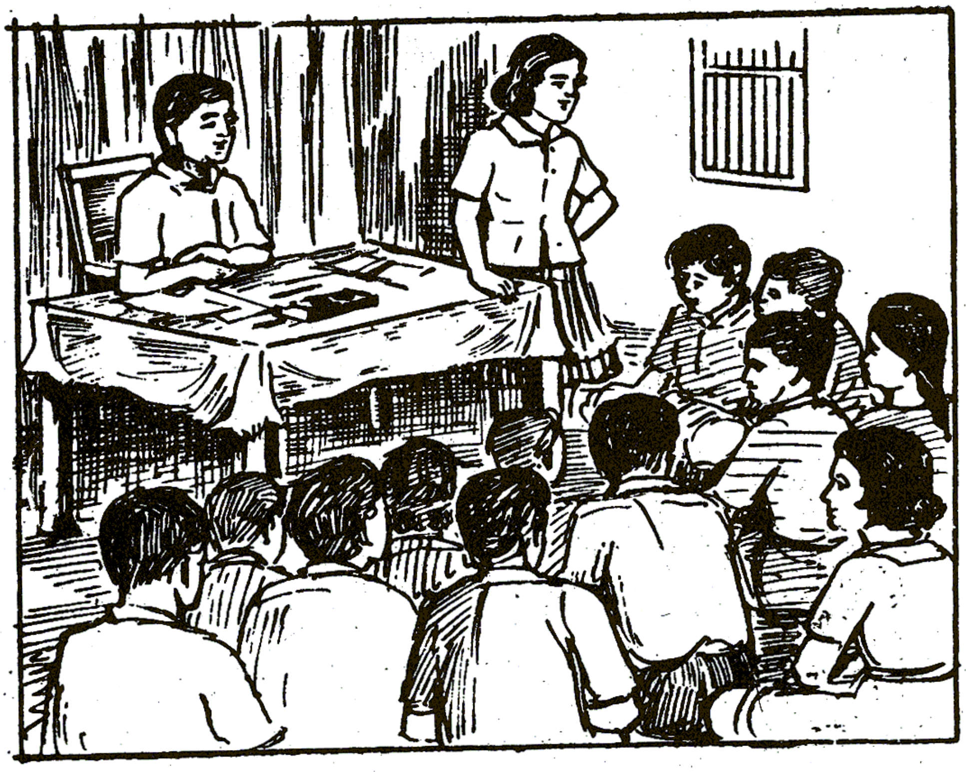

उनकी खूब हँसी उड़ाई। ये बड़े धर्मात्मा बने फिरते हैं, रात में भूखे रहेंगे तो सीधे स्वर्ग जावेंगे।

पर हुआ यह कि भोजन करते ही लोग बेहोश होने लगे। दूसरों को स्वर्ग भेजने वाले खुद स्वर्ग की तैयारी करने लगे। पर जल्दी ही उन पाँचों आदमियों ने उन्हें अस्पताल पहुँचाया। वहाँ मुश्किल से आधों को बचाया जा सका। यदि वे भी रात में खाते तो एक भी आदमी नहीं बचता। इसलिए किसी को भी रात्रि में भोजन नहीं करना चाहिए। इतना कहकर मैं अपना स्थान ग्रहण करती हूँ।

एक छात्र – (अपने स्थान पर ही खड़े होकर)
क्यों निर्मला बहिन ? रात के खाने में मात्र यही दोष है या कुछ और भी ?

अंध्यक्ष – (अपने स्थान पर खड़े होकर) आप अपने स्थान पर बैठ जाइये। क्या आपको सभा में बैठना भी नहीं

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आता ? क्या आप यह भी नहीं जानते कि सभा में इस प्रकार बीच में नहीं बोलना चाहिए तथा यदि कोई अति आवश्यक बात भी हो तो अध्यक्ष की आज्ञा लेकर बोलना चाहिए?

चूँकि प्रश्न आ ही गया है, अतः यदि निर्मला बहिन चाहें तो मैं उनसे अनुरोध करूँगा कि वे इसका उत्तर दें।

निर्मला — (खड़े होकर) यह तो मैंने रात्रि भोजन से होने वाली प्रत्यक्ष सामने दिखने वाली हानि की ओर संकेत किया है, पर वास्तव में रात्रि भोजन में गृद्धता अधिक होने से राग की तीव्रता रहती है, अतः वह आत्म-साधना में भी बाधक है।

अध्यक्ष — (खड़े होकर) निर्मला बहिन ने बड़ी ही अच्छी बात बताई है। हम सबको यही निर्णय कर लेना चाहिए कि आज से रात में नहीं खायेंगे।

बहुत से साथी बोलना चाहते हैं पर समय बहुत हो गया है, अतः आज उनसे क्षमा चाहते हैं। उनकी बात अगली मीटिंग में सुनेंगे। मैं अब भाषण तो क्या दूँ पर एक बात कह देना चाहता हूँ।

मैं अभी आठ दिन पहले पिताजी के साथ कलकत्ता गया था। वहाँ वैज्ञानिक प्रयोगशाला देखने को मिली। उसमें मैंने स्वयं अपनी आँखों से देखा कि जो पानी हमें साफ दिखाई देता है, सूक्ष्मदर्शी से देखने पर उसमें लाखों जीव नजर आते हैं।

अतः मैंने प्रतिज्ञा कर ली कि अब बिना छना

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पानी कभी भी नहीं पीऊँगा। मैं आप लोगों से भी निवदेन करना चाहता हूँ, आप लोग भी यह निश्चय कर लें कि पानी छानकर ही पीयेंगे।

इतना कहकर मैं आज की सभा की समाप्ति की घोषणा करता हूँ।

(भगवान महावीर की जयध्वनिपूर्वक सभा समाप्त होती है।)

प्रश्न –

१. पानी छानकर क्यों पीना चाहिए ?

२. रात में भोजन से क्या हानि है ?

३. क्रोध करना क्यों बुरा है ?

४. हठी बालक की कहानी अपने शब्दों में लिखिए।

५. सभा-संचालन की विधि अपने शब्दों में लिखिए।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाठ पाँचवाँ

गतियाँ

पुत्र – पिताजी ! आज मन्दिर में सुना कि "चारों गति के मांहि प्रभु दुःख पायो मैं घणों।" ये चारों गतियाँ क्या हैं, जिनमें दुःख ही दुःख है।

पिता – बेटा ! गति तो जीव की अवस्था-विशेष को कहते हैं। जीव संसार में मोटे तौर पर चार अवस्थाओं में पाये जाते हैं, उन्हें ही चार गतियाँ कहते हैं। जब यह जीव अपनी आत्मा को पहिचानकर उसकी साधना करता है तो चतुर्गति के दुःखों से छूट जाता है और अपना अविनाशी सिद्ध पद पा लेता है, उसे पंचम गति कहते हैं।

पुत्र – वे चार गतियाँ कौन-कौन-सी हैं ?

पिता – मनुष्य, तिर्यंच, नरक और देव।

पुत्र – मनुष्य तो हम तुम भी हैं न ?

पिता – हम मनुष्यगति में हैं, अतः मनुष्य कहलाते हैं। वैसे हैं तो हम तुम भी आत्मा (जीव)।

मनुष्यगति

जब कोई जीव कहीं से मरकर मनुष्यगति में

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जन्म लेता है अर्थात् मनुष्य-शरीर धारण करता है तो उसे मनुष्य कहते हैं।

पुत्र – अच्छा तो हम मनुष्य गति के जीव हैं। गाय, भैंस, घोड़ा आदि किस गति में हैं ?

पिता –वे तिर्यंचगति के जीव हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, कीड़े-मकोड़े, हाथी, घोड़े-कबूतर, मोर आदि पशु-पक्षी जो तुम्हें दिखाई देते हैं, वे सभी तिर्यंचगति में आते हैं।

तिर्यञ्चगति

जब कोई जीव मरकर इनमें पैदा होता है तो वह तिर्यंच कहलाता है।

पुत्र – जब मनुष्यों को छोड़ कर दिखाई देने वाले सभी तिर्यंच हैं तो फिर नारकी कौन हैं ?

पिता –इस पृथ्वी के नीचे सात नरक हैं। वहाँ का वातावरण बहुत ही कष्टप्रद है। वहाँ पर कहीं शरीर को जला देनेवाली भयंकर गर्मी और कहीं शरीर को गला देने वाली भयंकर सर्दी पड़ती है। भोजन-पानी का सर्वथा अभाव है। वहाँ जीवों को भयंकर भूख, प्यास की वेदना सहनी पड़ती है। वे लोग तीव्र कषायी भी होते हैं, आपस में लड़ते-झगड़ते रहते हैं, मारकाट मची रहती है।

नरकगति

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जो जीव मरकर ऐसे संयोगों में जन्म लेते हैं, उन्हें नारकी कहते हैं।

पुत्र – और देव...............?

पिता –जैसे जिन जीवों के भाव होते हैं, उनके अनुसार उन्हें फल भी मिलता है। उनके उन्हें फल मिले ऐसे स्थान भी होते हैं जैसे पाप का फल भोगने का स्थान नरकादि गति है, उसी प्रकार जो जीव पुण्य भाव करता है उनका फल भोगने का स्थान देवगति है। देवगति में मुख्यत: भोग-सामग्री प्राप्त रहती है।

देवगति

जो जीव मरकर देवों में जन्म लेते हैं, उन्हें देवगति के जीव कहते हैं।

पुत्र – अच्छी गति कौन-सी है ?

पिता –जब बता दिया कि चारों गति में दु:ख ही है तो फिर गति अच्छी कैसे होगी ? ये चारों संसार हैं।

इसे छोड़कर जो मुक्त हुए वे सिद्ध जीव पंचम गति वाले हैं। एकमात्र पूर्ण आनन्दमय सिद्धगति ही है।

पुत्र – मनुष्यगति को अच्छी कहो न ? क्योंकि इससे ही मोक्षपद मिलता है ?

पिता –यदि यह अच्छी होती तो सिद्ध जीव इसका भी परित्याग क्यों करते ? अत: चतुर्गति का परिभ्रमण छोड़ना ही अच्छा है ?

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

पुत्र – जब इन गतियों का चक्कर छोड़ना ही अच्छा है तो फिर यह जीव इन गतियों में घूमता ही क्यों है ?

पिता –जब अपराध करेगा तो सजा भोगनी ही पड़ेगी।

पुत्र – किस अपराध के फल में कौन-सी गति प्राप्त होती है ?

पिता –बहुत आरम्भ और बहुत परिग्रह रखने का भाव ही ऐसा अपराध है जिससे इस जीव को नरक जाना पड़ता है तथा भावों की कुटिलता अर्थात् मायाचार, छल-कपट तिर्यञ्चायु बंध के कारण हैं।

पुत्र – मनुष्य तथा देव........?

पिता –अल्प आरम्भ और अल्प परिग्रह रखने का भाव और स्वभाव की सरलता मनुष्यायु के बंध के कारण हैं। इसी प्रकार संयम के साथ रहने वाला शुभभावरूप रागांश और असंयमांश मंदकषायरूप भाव तथा अज्ञानपूर्वक किये गये तपश्चरण के भाव देवायु के बंध के कारण हैं।

पुत्र – उक्त भाव बंध के कारण होने से अपराध ही हैं तो फिर निरपराध दशा क्या है ?

पिता –एक वीतराग भाव ही निरपराध दशा है, अतः वह मोक्ष का कारण है।

पुत्र – इन सबके जानने से क्या लाभ हैं ?

पिता –हम यह जान जावेंगे कि चारों गतियों में दुःख ही दुःख हैं, सुख नहीं और चतुर्गति भ्रमण का कारण शुभाशुभ भाव है, इनसे छूटने का उपाय एक वीतराग भाव है। हमें वीतराग भाव प्राप्त करने के लिए ज्ञानस्वभावी आत्मा का आश्रय लेना चाहिए।

प्रश्न –

१. गति किसे कहते हैं ? वे कितने प्रकार की होती हैं ?

२. तिर्यञ्चगति किसे कहते हैं ?

३. नरकगति के वातावरण का वर्णन कीजिए। ऐसे कौन-से कारण हैं जिनसे जीव नरकगति प्राप्त करता है ?

४. क्या देवगति में भी सुख नहीं है ? सकारण उत्तर दीजिए।

५. सबसे अच्छी गति कौन-सी है ? युक्तिसंगत उत्तर दीजिए।

पाठ में आये हुए सूत्रात्मक सिद्धान्त वाक्य –

१. जीव की अवस्था विशेष को गति कहते हैं।

२. जीव कहीं से मरकर मनुष्य-शरीर धारण करता है, उसे मनुष्यगति कहते हैं।

३. जीव कहीं से मरकर तिर्यञ्च-शरीर धारण करता है, उसे तिर्यञ्चगति कहते हैं।

४. जीव कहीं से मरकर नारकी-शरीर धारण करता है, उसे नरकगति कहते हैं।

५. जीव कहीं से मरकर देव-शरीर धारण करता है, उसे देवगति कहते हैं।

६. जीव अपनी आत्मा को पहिचान कर उसकी साधना द्वारा चतुर्गति के दुःखों से छूटकर सिद्धपद पा लेता है, उसे पंचमगति कहते हैं।

७. एक वीतराग भाव ही पंचमगति (मोक्ष) का कारण है। वीतराग भाव प्राप्त करने के लिए ज्ञानस्वभावी आत्मा का आश्रय लेना चाहिए।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

पाठ छठवाँ

द्रव्य

छात्र – गुरुजी, अम्मा कहती थी कि जो हमें दिखाई देता है, वह तो सब पुद्गल है। यह पुद्गल क्या होता है ?

अध्यापक – ठीक तो है। हमें आँखों से तो सिर्फ वर्ण (रंग) ही दिखाई देता है और वह मात्र पुद्गल में ही पाया जाता है।

जिसमें स्पर्श, रस, गंध और वर्ण पाया जाय, उसे पुद्गल कहते हैं। यह अजीव द्रव्य है।

छात्र – द्रव्य किसे कहते हैं ? वे कितने प्रकार के हैं ?

अध्यापक – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं। वे छह प्रकार के हैं – जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल।

छात्र – तो क्या द्रव्यों में अजीव नहीं है ?

अध्यापक – जीव को छोड़कर बाकी सब द्रव्य अजीव ही तो हैं। जिनमें ज्ञान पाया जाय वे ही जीव हैं। बाकी सब अजीव।

छात्र – जब द्रव्य छह प्रकार के हैं तो हमें दिखाई केवल पुद्गल ही क्यों देता है ?

अध्यापक – क्योंकि इन्द्रियाँ रूप, रस आदि को ही जानती हैं और

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

आत्मा आदि वस्तुएँ अरूपी हैं, अतः इन्द्रियाँ उनके ज्ञान में निमित्त नहीं हैं।

छात्र — ....पूजा पाठ को धर्मद्रव्य कहते होंगे और हिंसादिक को अधर्म द्रव्य।

अध्यापक — नहीं भाई ! वे धर्म और अधर्म अलग बात है; ये धर्म और अधर्म तो द्रव्यों के नाम हैं जो कि सारे लोक में तिल में तेल के समान फैले हुए हैं।

छात्र — इनकी क्या परिभाषा है ?

अध्यापक — जिस प्रकार जल मछली के चलने में निमित्त है, उसी प्रकार स्वयं चलते हुए जीवों और पुद्गलों को चलने में जो निमित्त हो वही धर्म द्रव्य है तथा जैसे वृक्ष की छाया पथिकों को ठहरने में निमित्त होती है, उसी प्रकार गमन पूर्वक ठहरने वाले जीवों और पुद्गलों को ठहरने में जो निमित्त हो, वही अधर्म द्रव्य है।

छात्र — जब धर्म द्रव्य चलायेगा और अधर्म द्रव्य ठहरायेगा तो जीवों को बड़ी परेशानी होगी ?

अध्यापक — वे कोई चलाते ठहराते थोड़े ही हैं। जब जीव और पुद्गल स्वयं चलें या ठहरें तो मात्र निमित्त होते हैं।

छात्र — आकाश तो नीला-नीला साफ दिखाई देता ही है, उसे क्या समझना ?

अध्यापक — नहीं, अभी तुम्हें बताया था कि नीलापन-पीलापन तो पुद्गल की पर्याय है। आकाश तो अरूपी है, उसमें कोई रंग नहीं होता। जो सब द्रव्यों के रहने में निमित्त हो, वही आकाश है।

छात्र — यह आकाश ऊपर है न ?

अध्यापक — यह तो सब जगह है, ऊपर-नीचे, अगल में, बगल में। दुनियाँ की ऐसी कोई जगह नहीं जहाँ आकाश न हो। सब द्रव्य आकाश में ही हैं।

छात्र — काल तो समय को ही कहते हैं या कुछ और बात है ?

अध्यापक — काल का दूसरा नाम समय भी है, किन्तु काल – जीव, पुद्‌गल की तरह एक द्रव्य भी है। उसमें जो प्रतिसमय अवस्था होती है उसका नाम समय है। यह काल द्रव्य जगत के समस्त पदार्थों के परिणमन में निमित्त मात्र होता है।

छात्र — अच्छा तो ये द्रव्य हैं कुल कितने ?

अध्यापक — धर्म, अधर्म और आकाश तो एक-एक ही हैं, पर काल द्रव्य असंख्य हैं तथा जीव द्रव्य तो अनन्त हैं एवं पुद्‌गल जीवों से भी अनन्त गुणे हैं अर्थात् अनन्तानंत हैं।

छात्र — इन द्रव्यों के अलावा और कुछ नहीं है दुनिया में ?

अध्यापक — इनके अलावा कोई दुनियाँ ही नहीं है। छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं और विश्व को ही दुनियाँ कहते हैं।

छात्र — तो इस विश्व को बनाया किसने ?

अध्यापक — यह तो अनादि-अनन्त स्वनिर्मित है, इसे बनाने वाला कोई नहीं है।

छात्र — और भगवान कौन हैं ?

अध्यापक — भगवान दुनियाँ को जानने वाला है, बनाने वाला नहीं।

जो तीन लोक और तीन काल के समस्त पदार्थों को एक साथ जाने, वही भगवान है।

छात्र — आखिर दुनियाँ में जो कार्य होते हैं, उनका कर्ता कोई तो होगा?

अध्यापक — प्रत्येक द्रव्य अपनी-अपनी पर्याय (कार्य) का कर्ता है। कोई किसी का कर्ता नहीं है, ऐसी अनंत स्वतंत्रता द्रव्यों के स्वभाव में पड़ी हुई है। उसे जो पहिचान लेता है, वही आगे चलकर भगवान बनता है।

प्रश्न —

१. द्रव्य किसे कहते हैं ? वे कितने प्रकार के होते हैं ? नाम गिनाइये।

२. विश्व किसे कहते हैं, इसे बनाने वाला कौन है ? भगवान क्या करते हैं?

३. प्रत्येक द्रव्य की अलग-अलग संख्या लिखें।

४. परिभाषा लिखिए —

धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश द्रव्य और काल द्रव्य।

५. इन्द्रियों की पकड़ में आने वाले द्रव्य को समझाइये।

६. आत्मा का स्वभाव क्या है ? वह इन्द्रियों से क्यों नहीं जाना जा सकता है ?

७. अजीव और अरूपी द्रव्यों को गिनाइये।

पाठ में आये हुए सूत्रात्मक सिद्धान्त वाक्य

१. द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं।

२. यह लोक (विश्व) अनादि-अनन्त स्वनिर्मित है।

३. गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं।

४. जिसमें स्पर्श, रस, गन्ध और वर्ण पाया जाये, वही पुद्गल है।

५. जिसमें ज्ञान पाया जाय, वही जीव है।

६. धर्म द्रव्य – स्वयं चलते हुए जीवों और पुद्गलों की गति में निमित्त।

७. अधर्म द्रव्य – गमनपूर्वक ठहरने वाले जीवों और पुद्गलों के ठहरने में निमित्त।

८. आकाश द्रव्य – सब द्रव्यों के अवगाहन में निमित्त।

९. काल द्रव्य – सब द्रव्यों के परिवर्तन में निमित्त।

१०. सब द्रव्य अपनी-अपनी पर्यायों के कर्ता हैं, कोई भी पर का कर्ता नहीं है।

११. भगवान लोक को जानने वाला है, बनाने वाला नहीं।

१२. जीव को छोड़कर बाकी पाँच द्रव्य अजीव हैं।

१३. पुद्गल को छोड़कर बाकी पाँच द्रव्य अरूपी हैं।

१४. इन्द्रियाँ रूपी पुद्गल को जानने में ही निमित्त हो सकती हैं, आत्मा को जानने में नहीं।

पाठ सातवाँ

भगवान महावीर

अध्यापक – बालको ! कल भगवान महावीर का जन्मकल्याणक महोत्सव है। प्रातः प्रभात-फेरी निकलेगी। अतः सुबह पाँच बजे आना है और सुनो, शाम को महावीर चौक में आम सभा होगी, उसमें बाहर से पधारे हुए बड़े-बड़े विद्वान भगवान महावीर के सम्बन्ध में भाषण देंगे। तुम लोग वहाँ अवश्य पहुँचना।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पहला छात्र– गुरुजी ! बड़े विद्वानों की बातें तो हमारी समझ में नहीं आतीं। आप ही बताइये न, भगवान महावीर कौन थे? कब जन्मे थे?

अध्यापक – बच्चो ! भगवान जन्मते नहीं, बनते हैं। जन्म तो आज से करीब २६०५ वर्ष पहिले चैत्र शुक्ला १३ के दिन बालक वर्द्धमान का हुआ था। बाद में वह बालक वर्द्धमान ही आत्म-साधना का अपूर्व पुरुषार्थ कर भगवान महावीर बना।

दूसरा छात्र – इसका मतलब तो यह हुआ कि हमारे में से भी कोई भी आत्म-साधना कर भगवान बन सकता है। तो क्या वर्द्धमान जन्मते समय हम जैसे ही थे ?

अध्यापक – और नहीं तो क्या ? यह बात जरूर है कि वे प्रतिभाशाली, आत्मज्ञानी, विचारवान, स्वस्थ और विवेकी बालक थे। साहस तो उनमें अपूर्व था, किसी से कभी डरना तो उन्होंने सीखा ही नहीं था। अतः बालक उन्हें बचपन से वीर, अतिवीर कहने लगे थे।

तीसरा छात्र – उन्हें सन्मति भी तो कहते हैं ?

अध्यापक – उन्होंने अपनी बुद्धि का विकास कर पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया था, अतः सन्मति भी कहे जाते हैं और सबसे प्रबल राग-द्वेषीरूपी शत्रुओं को जीता था, अतः महावीर कहलाये। उनके पाँच नाम प्रसिद्ध हैं– वीर, अतिवीर, सन्मति, वर्द्धमान और महावीर।

पहला छात्र– उनके जन्म कल्याणक के समय तो उत्सव मनाया गया

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

होगा ? जब हम आज भी उत्सव मनाते हैं, तो तब का क्या कहना ?

अध्यापक – हाँ, वे नाथवंशीय क्षत्रिय राजकुमार थे। उनके पिता का नाम सिद्धार्थ और माता का नाम त्रिशला देवी था। उन्होंने तो उत्सव मनाया ही था, पर साथ ही सारी जनता ने यहाँ तक कि स्वर्ग के देव तथा इन्द्रादिकों ने भी उत्सव मनाया था।

दूसरा छात्र – उनका ही जन्मोत्सव क्यों मनाया जाता है, औरों का क्यों नहीं ?

अध्यापक – उनका यह अन्तिम जन्म था। इसके बाद तो उन्होंने जनम-मरण का नाश ही कर दिया। वे वीतराग और सर्वज्ञ बने। जन्म लेना कोई अच्छी बात नहीं है, पर जिस जन्म में जन्म-मरण का नाश कर भगवान बना जा सके, वही जन्म सार्थक है।

पहला छात्र– अच्छा तो आज जन्म-मरण का नाश करने वाले का जन्मोत्सव है।

दूसरा छात्र – गुरुजी, आपने उनके माता-पिता का नाम तो बताया, पर पत्नी और बच्चों का नाम तो बताया ही नहीं।

अध्यापक – उन्होंने शादी ही नहीं की थी। अतः पत्नी और बच्चो का प्रश्न ही नहीं उठता। उनके माता-पिता कोशिश कर हार गये, पर उन्हें शादी करने को राजी न कर सके।

तीसरा छात्र– तो क्या वे साधु हो गये थे ?

अध्यापक – और नहीं तो क्या ? बिना साधु हुए कोई भगवान बन

सकता है क्या ? उन्होंने तीस वर्ष की यौवनावस्था में नग्न दिगम्बर साधु होकर घोर तपश्चरण किया था। लगातार बारह वर्ष की आत्मसाधना के बाद उन्होंने केवलज्ञान की प्राप्ति की थी।

पहला छात्र— इसका मतलब यह हुआ कि वे ४२ वर्ष की उम्र में केवलज्ञानी बन गये थे।

अध्यापक — हाँ, फिर उनका लगातार ३० वर्ष तक सारे भारतवर्ष में समवशरण सहित विहार तथा दिव्यध्वनि द्वारा तत्त्व का उपदेश होता रहा। अंत में पावापुर में आत्मध्यान में लीन हो ७२ वर्ष की आयु में दीपावली के दिन मुक्ति प्राप्त की।

दूसरा छात्र — यह पावापुर कहाँ है ?

अध्यापक — पावापुर बिहार में नवादा रेल्वे स्टेशन के पास में है।

छात्र — तो दीपावली भी उनकी मुक्ति-प्राप्ति की खुशी में मनाई जाती है ?

अध्यापक — हाँ ! हाँ !! दीपावली कहो चाहे महावीर निर्वाणोत्सव, एक ही बात है। उसी दिन उनके प्रमुख शिष्य इन्द्रभूति गौतम को केवलज्ञान प्राप्त हुआ था। वे गौतम गणधर के नाम से जाने जाते हैं।

पहला छात्र— वे तीस वर्ष तक क्या उपदेश देते रहे ?

अध्यापक — यह बात तो तुम विस्तार से शाम की सभा में विद्वानों के मुख से ही सुनना। मैं तो अभी उनके द्वारा दी गई दो-चार शिक्षायें बताये देता हूँ—

१. सभी आत्मायें बराबर हैं, कोई छोटा-बड़ा नहीं है।
२. भगवान कोई अलग नहीं होते। जो जीव पुरुषार्थ करे, वही भगवान बन सकता है।
३. भगवान जगत की किसी भी वस्तु का कुछ कर्ता-हर्ता नहीं है, मात्र जानता ही है।
४. हमारी आत्मा का स्वभाव भी जानना-देखना है, कषाय आदि करना नहीं है।
५. कभी किसी का दिल दुखाने का भाव मत करो।
६. झूठ बोलना और झूठ बोलने का भाव करना पाप है।
७. चोरी करना और चोरी करने का भाव करना बुरा काम है।
८. संयम से रहो, क्रोध से दूर रहो और अभिमानी न बनो।
९. छल-कपट करना और भावों में कुटिलता रखना बहुत बुरी बात है।
१०. लोभी व्यक्ति सदा दुःखी रहता है।
११. हम अपनी ही गलती से दुःखी हैं और अपनी भूल सुधार कर सुखी हो सकते हैं।

प्रश्न –

१. भगवान महावीर का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
२. उनकी क्या शिक्षायें थीं ?
३. संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखो –
   दीपावली, महावीर-जयन्ती, पावापुर।
४. महावीर के कितने नाम हैं ? बताकर प्रत्येक की सार्थकता बताइये।
५. उनका ही जन्म-दिवस क्यों मनाया जाय ?

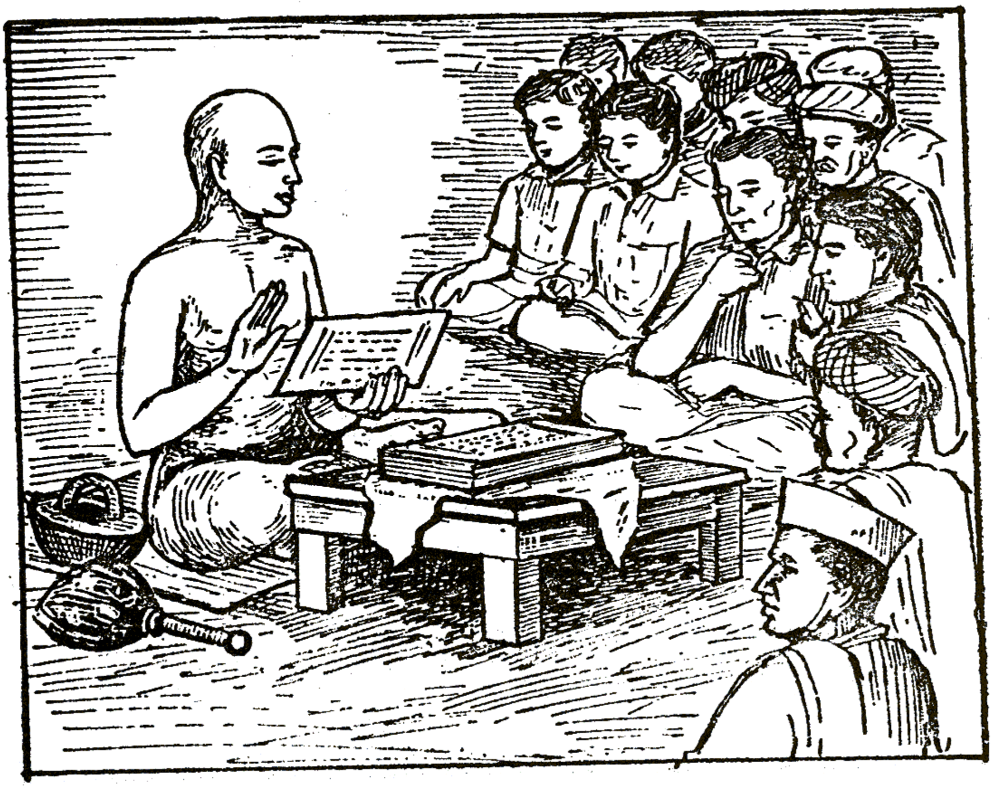

पाठ आठवाँ

जिनवाणी स्तुति

सवैया –

मिथ्यातम नाशवे को, ज्ञान के प्रकाशवे को।
आपा पर भासवे को, भानु सी बखानी है॥
छहों द्रव्य जानवे को, बन्ध विधि भानवे को।
स्व पर पिछानवे को, परम प्रमानी है॥
अनुभव बतायवे को, जीव के जतायवे को।
काहू न सतायवे को, भव्य उर आनी है॥
जहाँ तहाँ तारवे को, पार के उतारवे को।
सुख विस्तारवे को, ये ही जिनवाणी है॥

दोहा –

हे जिनवाणी भारती, तोहि जपों दिन रैन।
जो तेरी शरणा गहे, सो पावे सुख चैन॥
जा वाणी के ज्ञान तैं, सूझे लोकालोक।
सो वाणी मस्तक नवों, सदा देत हो ढोक॥

जिनवाणी स्तुति का अर्थ

हे जिनवाणीरूपी सरस्वती ! तुम मिथ्यात्वरूपी अंधकार का नाश करने के लिए तथा आत्मा और परपदार्थों का सही ज्ञान कराने के लिए सूर्य के समान हो।

छहों द्रव्यों का स्वरूप जानने में, कर्मों की बन्ध-पद्धति का ज्ञान कराने में, निज और पर की सच्ची पहिचान कराने में तुम्हारी प्रामाणिकता असंदिग्ध है।

अतः हे जिनवाणी ! भव्य जीवों ने तुमको अपने हृदय में धारण कर रखा है, क्योंकि तुम आत्मानुभव करने का, आत्मा की प्रतीति करने का तथा किसी को दुःख न हो, ऐसा – मार्ग बताने में समर्थ हो।

एकमात्र जिनवाणी ही संसार से पार उतारने में समर्थ है एवं सच्चे सुख को पाने का रास्ता बताने वाली है।

हे जिनवाणीरूपी सरस्वती ! मैं तेरी ही आराधना दिन-रात करता हूँ, क्योंकि जो व्यक्ति तेरी शरण में जाता है, वही सच्चा अतीन्द्रिय आनन्द पाता है।

जिस वीतराग-वाणी का ज्ञान हो जाने पर सारी दुनिया का सही ज्ञान हो जाता है, उस वाणी को मैं मस्तक नवाकर सदा नमस्कार करता हूँ।

प्रश्न –

१. जिनवाणी की स्तुति लिखिए।
२. स्तुति में जो भाव प्रकट किये हैं, उन्हें अपनी भाषा में लिखिए।
३. जिनवाणी किसे कहते हैं ?
४. जिनवाणी की आराधना से क्या लाभ है ?

महावीर वन्दना

जो मोह माया मान मत्सर, मदन मर्दन वीर हैं।
जो विपुल विघ्नों में भी, ध्यान धारण धीर हैं।।
जो तरण-तारण, भव-निवारण, भव जलधि के तीर हैं।
वे वंदनीय जिनेश, तीर्थंकर स्वयं महावीर हैं।।

जो राग-द्वेष विकार वर्जित, लीन आतम ध्यानमें।
जिनके विराट् विशाल निर्मल, अचल केवलज्ञान में।।
युगपद् विशद सकलार्थ झलकें, ध्वनित हो व्याख्यान में।
वे वर्द्धमान महान जिन, विचरें हमारे ध्यान में।।

जिनका परम पावन चरित, जलनिधि समान अपार है।
जिनके गुणों के कथन में, गणधर न पावैं पार है।।
बस वीतराग-विज्ञान ही, जिनके कथन का सार है।
उन सर्वदर्शी सन्मती को, वंदना शत बार है।।

जिनके विमल उपदेश में सबके उदय की बात है।
समभाव समताभाव जिनका, जगत में विख्यात है।।
जिसने बताया जगत को, प्रत्येक कण स्वाधीन है।
कर्त्ता न धर्त्ता कोई है, अणु-अणु स्वयं में लीन है।।

आतम बने परमातमा, हो शान्ति सारे देश में।
है देशना सर्वोदयी, महावीर के सन्देश में।।

– डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल